

भारत के सर्वोच्च न्यायालय में

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार

आपराधिक अपील संख्या 3403/2024
(एसएलपी (सीआरएल) संख्या 12912/2022)

रामजी लाल बैरवा और अन्य

...अपीलकर्ता(गण)

बनाम

राजस्थान राज्य और अन्य

...प्रतिवादी(गण)

हेडनोट्स

पोकसो अपराध समझौता योग्य नहीं हैं - निजी समझौता अभियोजन को रोक नहीं सकता। बाल यौन उत्पीड़न मामलों में निजी समझौते के सिद्धांत पर उच्च न्यायालय का भरोसा अनुचित था। स्कूल में नाबालिग के साथ शिक्षक द्वारा दुर्व्यवहार एक गंभीर अपराध है, जिसके लिए सक्रिय अभियोजन की आवश्यकता होती है। सामाजिक हित ने कानून को बनाए रखने के लिए तीसरे पक्ष की अपील को उचित ठहराया। अपराधों के सार्वजनिक प्रभाव को देखते हुए धारा 482 सीआरपीसी को सावधानी से लागू किया जाना चाहिए।

अभिनिर्धारित: एफआईआर को बहाल किया जाता है - आपराधिक कार्यवाही जारी रहेगी।

निर्णयसी टी रविकुमार, जे.

1. प्रसिद्ध अमेरिकी कवि एच. डब्ल्यू. लॉन्गफेलो ने इस आशय की बात लिखी थी कि एक फटा हुआ जैकेट जल्दी ही मरम्मत किया जा सकता है, लेकिन एक बच्चे का आहत हृदय पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता। निस्संदेह, यह एक गूढ़ सत्य को उजागर करता है, विशेषकर उस बच्चे के संदर्भ में जो यौन उत्पीड़न का शिकार हुआ हो — चाहे वह उग्र हो या जबरन प्रवेश के रूप में; या किसी भी प्रकार का यौन शोषण या दोहन हो। यह बात विशेष रूप से एक बालिका के लिए और भी गंभीर हो जाती है, क्योंकि यह अनुभव उसे जीवनभर डराता रह सकता है और उसके पारिवारिक जीवन को भी प्रभावित कर सकता है।

शिक्षण के विषय में मार्कस टुलियस सिसेरो (106-43 ईसा पूर्व) ने अपनी कृति 'De Officiis' (कर्तव्यों पर) में कहा था: "उस व्यक्ति से अधिक महान कार्य या राज्य के लिए अधिक मूल्यवान योगदान और क्या हो सकता है, जो आने वाली पीढ़ी को शिक्षित करता है?"

2. शिक्षण पर शायद कोई अशुभ छाया हो, कि दुर्भाग्यपूर्ण, अमानवीय और अक्षम्य घटनाएँ घटित होती हैं, यद्यपि बार-बार नहीं। निम्नलिखित तथ्यात्मक वर्णन उपर्युक्त प्रस्तावना के अस्तित्व के कारण को स्पष्ट करेगा: –

एफआईआर संख्या 6/2022 दिनांक 08.01.2022 को सरदार गंगापुर सिटी थाना, जिला सवाई माधोपुर, राजस्थान में दर्ज की गई। यह एफआईआर इस मामले में पीड़िता के पिता (उत्तरदाता संख्या 4) के द्वारा उत्तरदाता संख्या 3 के विरुद्ध दर्ज कराई गई थी। एफआईआर भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में 'आईपीसी') की धारा 354 A, 342, 509 और 504, लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 (संक्षेप में 'पॉक्सो अधिनियम') की धारा 7 और 8 तथा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 (संक्षेप में 'एससी/एसटी अधिनियम') की धारा 3(1)(r), 3(1)(s), 3(1)(b) और 3(2)(vii) के अंतर्गत दर्ज की गई। इस एफआईआर में यह आरोप लगाया गया है कि दिनांक 06.01.2022 को, जब पीड़िता, जो उस समय उच्च माध्यमिक विद्यालय की कक्षा 11 वीं की छात्रा थी, कक्षा में अकेली थी, तब उत्तरदाता संख्या 3, जो एक शिक्षक है, वहाँ आया। खिड़की से झाँककर यह सुनिश्चित करने के बाद कि कक्षा के आसपास कोई नहीं है, वह (उत्तरदाता संख्या 3) उसके पीछे आया और उसके गालों को थपथपाने लगा, और फिर जल्द ही उसने अपना हाथ उसके ब्लाउज के अंदर डालकर उसकी छाती को सहलाया। इस घटना से पीड़िता को अत्यधिक पीड़ा और क्रोध हुआ, वह तुरंत उठी और भाग गई। आरोपी ने उसे रोकने की कोशिश की और 'डेढ़ चमार' जैसे घिनौने और अपमानजनक जातिसूचक शब्दों के साथ गालियाँ दीं। इसके बाद पीड़िता स्कूल के गेट के पास जाकर बैठ गई और शिक्षकों से सहायता की गुहार लगाई, परंतु किसी ने उसकी मदद नहीं की। उल्टा शिक्षकों ने उसे इस घटना के बारे में चुप रहने के लिए समझाया। यद्यपि प्रधानाचार्य को इस घटना की जानकारी मिली, उन्होंने भी केवल एक खाली कागज़ पर पीड़िता से हस्ताक्षर करवाए। इसी बीच एक शिक्षक उत्तरदाता संख्या 4 के घर गया और उसकी पत्नी को यह कहकर स्कूल ले गया कि उनकी बेटी की तबीयत ठीक नहीं है। जब वह स्कूल पहुँची, तो उसने अपनी बेटी को अत्यधिक डरी और स्तब्ध अवस्था में पाया, जो उस समय कुछ भी बोल नहीं पा रही थी। किंतु जब वे घर पहुँचे, तब बेटी ने पूरी घटना अपनी माँ को बताई। माँ (उत्तरदाता संख्या 4 की पत्नी) ने यह जानकारी मोबाइल फोन पर अपने पति को दी, जो उस समय रोजगार के सिलसिले में किसी अन्य गाँव में था। अगले दिन उत्तरदाता संख्या 4 घर लौटा और पीड़िता ने उसे पूरी घटना विस्तार से सुनाई, जिसके बाद उसने उपर्युक्त एफआईआर दर्ज करवाई।

3. स्पष्ट रूप से, उपरोक्त एफआईआर दिनांक 08.01.2022 को दर्ज की गई थी। इस मामले में उत्तरदाता संख्या 3 ने पीड़िता के पिता, अर्थात् उत्तरदाता संख्या 4 के साथ 31.01.2022 को समझौता कर लिया, और इसके पश्चात राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'क्रि.प्र.सं.') की धारा 482 के अंतर्गत एस.बी. (फौजदारी) विविध याचिका संख्या 1348/2022 दायर की, जिसमें उपर्युक्त एफआईआर तथा उस पर आधारित सभी कार्यवाहियों को रद्द करने की प्रार्थना की गई। विवादित आदेश दिनांक 04.02.2022 के अनुसार, उच्च न्यायालय ने, यद्यपि लोक अभियोजक द्वारा इसका विरोध किया गया, फिर भी उक्त याचिका को स्वीकार कर लिया और संबंधित एफआईआर तथा उस पर आधारित सभी कार्यवाहियों को रद्द कर दिया। विवादित आदेश से यह स्पष्ट होता है कि उच्च न्यायालय ने यह ध्यान में रखते हुए कि उत्तरदाता संख्या 3 ने उत्तरदाता संख्या 4 के साथ सौहार्दपूर्वक विवाद का निपटारा कर लिया है, और इस न्यायालय (सर्वोच्च न्यायालय) के ग्यान सिंह बनाम पंजाब राज्य मामले में दिए गए निर्णय

पर भरोसा करते हुए, एफआईआर तथा सभी आगामी कार्यवाहियों को रद्द कर दिया। उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला:—

“...इस मामले में आरोपित अपराध समझौता योग्य नहीं है, तथापि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने ग्यान सिंह बनाम पंजाब राज्य [(2012) 10 SCC 303]के मामले में यह सिद्धांत प्रतिपादित किया है कि यदि न्यायालय इस बात से संतुष्ट हो कि अपराध पूरी तरह से व्यक्तिगत प्रकृति का है और उससे सार्वजनिक शांति या व्यवस्था प्रभावित नहीं होती, और यदि ऐसा लगे कि समझौते के कारण ऐसी कार्यवाही को रद्द करना शांति स्थापित करेगा तथा न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति करेगा, तो उच्च न्यायालय को अपने अंतर्निहित अधिकारों का प्रयोग कर उसे रद्द करने में संकोच नहीं करना चाहिए। यह भी अवलोकन किया गया कि ऐसे मामलों में अभियोजन पक्ष दुर्बल हो जाता है और ऐसी दुर्बल अभियोजन प्रक्रिया को आगे बढ़ाना समय और ऊर्जा की बर्बादी होगी। इससे समझौता भी बाधित होगा और शांति बहाली में भी रुकावट उत्पन्न होगी। यह न्यायालय माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों से यथोचित रूप से निर्देशित है और यह अनुभव करता है कि जब विवाद मूलतः पक्षकारों के बीच का हो — चाहे वे आपस में रिश्तेदार हों, पड़ोसी हों या व्यावसायिक संबंध रखते हों — और जो समाज पर व्यापक रूप से प्रभाव नहीं डालता, तो ऐसे मामलों में, दोनों पक्षों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखने, संबंधों की पुनर्स्थापना और उनके बीच विवाद को स्थायी रूप से समाप्त करने के उद्देश्य से, उच्च न्यायालय को एफआईआर तथा उस पर आधारित सभी कार्यवाहियों को रद्द करने के लिए अपने अंतर्निहित अधिकारों का प्रयोग करना चाहिए।”

4. अपीलकर्ताओं ने यह कहा कि वे सामान्य नागरिक हैं, जो उसी तहसील और ज़िले में निवास करते हैं, जहाँ उत्तरदाता संख्या 4 रहते हैं। उन्होंने संविधान के अनुच्छेद 32 के अंतर्गत इस न्यायालय में याचिका दायर कर उस आदेश को चुनौती दी है, जिसके द्वारा उपर्युक्त एफआईआर तथा उस पर आधारित सभी कार्यवाहियाँ रद्द कर दी गई थीं। उनका तर्क है कि उत्तरदाता संख्या 3 के विरुद्ध दर्ज एफआईआर में ऐसे कृत्यों के गंभीर आरोप थे, जो भारतीय दंड संहिता (IPC) और *पॉक्सो अधिनियम* की विभिन्न धाराओं के अंतर्गत अपराध की श्रेणी में आते हैं; ये मात्र व्यक्तिगत या पारिवारिक प्रकृति के विवाद नहीं थे, बल्कि समाज के विरुद्ध किए गए अपराध थे। यह भी कहा गया कि एफआईआर को रद्द करने का निर्णय केवल उत्तरदाता संख्या 3 (आरोपी) और उत्तरदाता संख्या 4 (नाबालिग पीड़िता के पिता) के बीच हुए समझौते के आधार पर लिया गया, जबकि राज्य (उत्तरदाता संख्या 1) ने, इस निर्णय के विरुद्ध कोई चुनौती नहीं दी, यद्यपि यह निर्णय लोक अभियोजक के विरोध को नज़रअंदाज़ कर पारित किया गया था। अपीलकर्ताओं ने यह भी कहा कि उत्तरदाता संख्या 3 के विरुद्ध लगाए गए आरोप अत्यंत गंभीर प्रकृति के थे, जिनका समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ता है, और यदि आरोपी को बिना मुकदमा चलाए छोड़ दिया गया, तो इस प्रकार की घटनाओं की पुनरावृत्ति हो सकती है। साथ ही यह निर्णय पीड़िता और समग्र समाज — दोनों के साथ अन्याय होगा। दिनांक 30.09.2022 को, इस न्यायालय ने नोटिस जारी किया और यह ध्यान में रखते हुए कि इस मामले में महत्वपूर्ण मुद्दे शामिल हैं, माननीय श्री आर. बसंत, वरिष्ठ अधिवक्ता से न्यायालय की सहायता हेतु *अमिकस क्यूरी* (न्यायमित्र) के रूप में सहयोग करने का अनुरोध किया, जिसे विद्वान

अधिवक्ता ने विनम्रतापूर्वक स्वीकार किया। दिनांक 13.10.2022 को, श्री अविरल सक्सेना, अधिवक्ता, ने वरिष्ठ अधिवक्ता की सहायता करने पर सहमति जताई। दिनांक 02.12.2022 को, पक्षकारों की ओर से उपस्थित अधिवक्ताओं तथा *अमिकस क्यूरी* की दलीलें सुनने के बाद और यह देखते हुए कि अनुच्छेद 32 के अंतर्गत दायर रिट याचिका को जारी रखना कठिन है, इस न्यायालय ने उक्त रिट याचिका को संविधान के अनुच्छेद 136 के अंतर्गत *विशेष अनुमति याचिका* में परिवर्तित कर दिया और आगे निम्नलिखित आदेश पारित किया:

“पक्षकार अगली सुनवाई की तिथि पर न्यायालय के समक्ष विषय की मेरिट पर अपनी दलीलें प्रस्तुत करें। दिनांक 20.01.2023 को सूचीबद्ध किया जाए।”

5. उत्तरदाता संख्या 3 और 4 की ओर से उपस्थित वरिष्ठ अधिवक्ताओं ने दिनांक 04.02.2022 को पारित आदेश को चुनौती देने के लिए अपीलकर्ताओं के अधिकारिता पर जोरदार आपत्ति उठाई, यह कहते हुए कि वे उपरोक्त आपराधिक विविध याचिका के पक्षकार नहीं थे। अपीलकर्ताओं की अधिकारिता को चुनौती देने के अतिरिक्त, इन उत्तरदाताओं का यह भी तर्क था कि एफआईआर और उससे संबंधित सभी कार्यवाहियों को रद्द करना ग्यान सिंह बनाम पंजाब राज्य के इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि-सिद्धांत के अनुरूप कानूनी रूप से अनुमेय है, और इस प्रकार के हस्तक्षेप तथा परिणामस्वरूप रद्दीकरण के कारणों का स्पष्ट उल्लेख विवादित आदेश में किया गया है। इन उत्तरदाताओं के अनुसार, अपीलकर्ता इस याचिका से पूर्णतः बाहरी व्यक्ति हैं और आक्षेपित आदेश से उनका कोई प्रत्यक्ष या वैधानिक सरोकार नहीं है। इसी बीच, दिल्ली बाल अधिकार संरक्षण आयोग ने एक हस्तक्षेप याचिका दायर की है, जिसमें इस विशेष अनुमति याचिका में उठाए गए मुद्दों के न्यायसंगत समाधान के लिए न्यायालय की सहायता करने की अनुमति माँगी गई है। मामले में उठाए गए मुद्दों की प्रकृति और यह तथ्य कि हस्तक्षेप बाल अधिकार संरक्षण आयोग द्वारा माँगा गया है, को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय ने हस्तक्षेपकर्ता के अधिवक्ता की दलीलें सुनीं, साथ ही *अमिकस क्यूरी* श्री आर. बसंत की, जो श्री अविरल सक्सेना की कुशल सहायता से न्यायालय की सहायता कर रहे हैं, और पक्षकारों के अधिवक्ताओं की भी सुनवाई की।

6. तथ्यों के समग्र परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखते हुए और विरोधी पक्षों की दलीलों पर गौर करते हुए, इस अपील में विचार हेतु निम्नलिखित दो महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न होते हैं:-

I. क्या किसी आपराधिक कार्यवाही में तीसरे पक्ष को, जो उस कार्यवाही का पक्षकार नहीं है, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत दायर विशेष अनुमति याचिका में, पक्षकारों के बीच हुए समझौते के आधार पर संबंधित प्राथमिकी तथा उस पर आधारित सभी आगे की कार्यवाहियों को रद्द करने वाले आदेश को चुनौती देने का अधिकार प्राप्त है?

II. क्या गंभीर और जघन्य अपराधों से संबंधित आपराधिक कार्यवाही, शिकायत या प्राथमिकी, जिनका समाज पर गंभीर प्रभाव पड़ता है, को केवल इस आधार पर रद्द करने की शक्ति प्रयोग में लाई जा सकती है कि अपराधी और पीड़ित या पीड़ित के माता-पिता के बीच समझौता हो गया है, और इस संबंध में इस न्यायालय द्वारा *ग्यान सिंह* मामले में प्रतिपादित सिद्धांत पर भरोसा किया गया है?

7. कहने की जरूरत नहीं कि उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर इस अपील का भाग्य तय करेंगे। पहले प्रश्न का उत्तर देने के लिए, विभिन्न कारकों पर गौर करना होगा। यह जरूरी है कि इस बात पर ध्यान दिया जाए कि क्या अपराधी पर नैतिक पतन या समाज के खिलाफ अपराध करने का आरोप है या क्या वे पूरी तरह से निजी प्रकृति के हैं। चूंकि कथित अपराध बच्चों से संबंधित विशेष कानून के अंतर्गत आते हैं, इसलिए उक्त अधिनियम के उद्देश्य और उद्देश्य पर भी उपरोक्त संबंध में विचार करने की आवश्यकता हो सकती है। विद्वान न्यायमित्र ने इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों का हवाला देते हुए इस बात पर जोर दिया कि जब आपराधिक कार्यवाही अपराधी और पीड़ित के बीच समझौते के आधार पर या पीड़ित की ओर से माता-पिता द्वारा अचानक समाप्त कर दी जाती है, जबकि कथित अपराध समाज पर प्रभाव डालने वाला और जघन्य तथा गंभीर प्रकृति का है और फिर भी राज्य ने कानून के अनुसार मामले को आगे नहीं बढ़ाया, इस तथ्य की अनदेखी करते हुए कि कार्यवाही को इस तरह से रद्द किया गया था, सरकारी अभियोजक के विरोध की अनदेखी करते हुए, एक जनहितैषी व्यक्ति को न्याय के हित में ऐसे आदेश को चुनौती देने का अधिकार होना चाहिए। इसके अलावा यह भी दलील दी गई है कि ऐसी परिस्थितियों में यदि कोई जनहितैषी व्यक्ति इस आधार पर अयोग्य है तो इससे अपराधी को मुकदमे का सामना किए बिना ही बच निकलने में मदद मिलेगी। ऐसी स्थितियों के परिणामस्वरूप समाज के हितों के लिए हानिकारक ऐसे अपराधों की पुनरावृत्ति हो सकती है। इस बात को पुष्ट करने के लिए कि एक उत्साही नागरिक को भारतीय संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत याचिका दायर करने का अधिकार है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि न्याय हो, विद्वान न्यायमित्र ने पीएसआर साधनाथम बनाम अरुणाचलम, शिवनंदन पासवान बनाम बिहार राज्य और अन्य, अमानुल्लाह और अन्य बनाम बिहार राज्य और वी.एस. अच्युतानंदन बनाम आर. बालकृष्ण पिल्लई में इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया। हस्तक्षेपकर्ता के विद्वान वकील ने भी न्यायमित्र द्वारा अधिकार के प्रश्न पर दिए गए उक्त प्रस्तुतियों और तर्कों का समर्थन किया।

8. इसके विपरीत, तीसरे प्रतिवादी, जो आरोपी है, जिसके कहने पर विषयगत एफआईआर को रद्द किया गया था, के लिए उपस्थित विद्वान वकील ने तर्क दिया कि किसी तीसरे पक्ष/अजनबियों के लिए आपराधिक कार्यवाही में हस्तक्षेप करना अस्वीकार्य है। उक्त तर्क के समर्थन में, उन्होंने राजीव रंजन सिंह 'लालन' बनाम भारत संघ, सिमरनजीत सिंह मान बनाम भारत संघ और बार काउंसिल ऑफ महाराष्ट्र बनाम एम.वी. दाभोलकर जैसे विभिन्न निर्णयों का हवाला दिया।

9. यह देखना निराशाजनक है कि चौथे प्रतिवादी, पीड़िता के पिता की ओर से पेश हुए विद्वान वकील ने अपीलकर्ताओं के उस आदेश के खिलाफ विशेष अनुमति याचिका को बरकरार रखने के अधिकार को पूरी ताकत से चुनौती दी, जिसके तहत तीसरे प्रतिवादी, आरोपी के खिलाफ दर्ज एफआईआर को तीसरे और चौथे प्रतिवादियों के बीच समझौते के आधार पर रद्द कर दिया गया था। यह तर्क दिया गया है कि चूंकि अपीलकर्ताओं के भाग III के तहत किसी भी मौलिक अधिकार का उल्लंघन नहीं हुआ है, इसलिए वे भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत याचिका नहीं रख सकते हैं और केवल इसलिए कि उनके द्वारा अनुच्छेद 32 के तहत दायर याचिका को भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत एक में परिवर्तित कर दिया गया था, अपीलकर्ता उच्च न्यायालय द्वारा धारा 482, सीआरपीसी के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए पारित दिनांक 04.02.2022 के आदेश को चुनौती देने के लिए अधिकार प्राप्त नहीं करेंगे। विद्वान

वकील ने अपने तर्कों के समर्थन में एस.पी. गुप्ता बनाम भारत संघ 9 में इस न्यायालय के निर्णय का हवाला दिया।

10. प्रतिवादियों की ओर से प्रस्तुत तर्कों और विद्वान न्यायमित्र तथा हस्तक्षेपकर्ता के वकील की दलीलों पर विचार करने से पहले, हम पोक्सो अधिनियम के कुछ प्रासंगिक पहलुओं का उल्लेख करना उचित समझते हैं। पोक्सो अधिनियम के परिचय के रूप में, वास्तव में संसद को 'पोक्सो अधिनियम' बनाने के लिए किस बात ने प्रेरित किया, यह इस प्रकार बताया गया है:-

“बच्चों के खिलाफ यौन अपराधों को मौजूदा कानूनों द्वारा पर्याप्त रूप से संबोधित नहीं किया जाता है। ऐसे अपराधों की एक बड़ी संख्या में न तो विशेष रूप से प्रावधान किया गया है और न ही उन्हें पर्याप्त रूप से दंडित किया गया है। बच्चों के खिलाफ ऐसे अपराधों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाना चाहिए और प्रभावी रोकथाम के रूप में पर्याप्त दंड के माध्यम से उनका मुकाबला किया जाना चाहिए। यह अधिनियम बच्चों के हितों और कल्याण की रक्षा के लिए उचित सम्मान के साथ यौन उत्पीड़न, यौन उत्पीड़न और पोर्नोग्राफी के अपराधों से बच्चों की सुरक्षा प्रदान करता है।”

11. संदर्भ के तौर पर, पोक्सो अधिनियम के अधिनियमन के उद्देश्यों और कारणों के कथन का उल्लेख करना उचित है। यह इस प्रकार है: -

“उद्देश्यों और कारणों का विवरण

संविधान का अनुच्छेद 15, अन्य बातों के साथ-साथ, राज्य को बच्चों के लिए विशेष प्रावधान करने की शक्तियाँ प्रदान करता है। इसके अलावा, अनुच्छेद 39, अन्य बातों के साथ-साथ, यह प्रावधान करता है कि राज्य विशेष रूप से अपनी नीति को इस दिशा में निर्देशित करेगा कि बच्चों की कोमल उम्र का दुरुपयोग न हो और उनके बचपन और युवावस्था को शोषण से बचाया जाए और उन्हें स्वस्थ तरीके से और स्वतंत्रता और सम्मान की स्थिति में विकसित होने की सुविधाएँ दी जाएँ।

2. बच्चों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन, जिसे 11 दिसंबर, 1992 को भारत द्वारा अनुमोदित किया गया था, राज्यों को (ए) किसी बच्चे को किसी भी गैरकानूनी यौन गतिविधि में शामिल होने के लिए प्रेरित या मजबूर करने; (बी) वेश्यावृत्ति या अन्य गैरकानूनी यौन प्रथाओं में बच्चों के शोषणकारी उपयोग को रोकने के लिए सभी उचित राष्ट्रीय, द्विपक्षीय और बहुपक्षीय उपाय करने की आवश्यकता है; और (सी) बच्चों के शोषणकारी उपयोग को रोकने के लिए अश्लील प्रदर्शन और सामग्री।

3. राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो द्वारा एकत्र किए गए आंकड़ों से पता चलता है कि बच्चों के खिलाफ यौन अपराधों के मामलों में वृद्धि हुई है। महिला एवं बाल

विकास मंत्रालय द्वारा किए गए 'बाल दुर्व्यवहार पर अध्ययन: भारत 2007' से इसकी पुष्टि होती है। इसके अलावा, बच्चों के खिलाफ यौन अपराधों को मौजूदा कानूनों द्वारा पर्याप्त रूप से संबोधित नहीं किया जाता है। ऐसे अपराधों की एक बड़ी संख्या के लिए न तो विशेष रूप से प्रावधान किए गए हैं और न ही उन्हें पर्याप्त रूप से दंडित किया गया है। पीड़ित और गवाह दोनों के रूप में बच्चे के हितों की रक्षा की जानी चाहिए। यह महसूस किया जाता है कि बच्चों के खिलाफ अपराधों को स्पष्ट रूप से परिभाषित करने और प्रभावी रोकथाम के रूप में उचित दंड के माध्यम से मुकाबला करने की आवश्यकता है।

4. इसलिए, न्यायिक प्रक्रिया के प्रत्येक चरण में बच्चों के हितों और कल्याण की रक्षा के लिए उचित ध्यान देते हुए यौन उत्पीड़न, यौन उत्पीड़न और पोर्नोग्राफी के अपराधों से बच्चों की सुरक्षा के लिए एक आत्मनिर्भर व्यापक कानून बनाने का प्रस्ताव है, जिसमें रिपोर्टिंग, साक्ष्य की रिकॉर्डिंग, अपराधों की जांच और सुनवाई के लिए बाल-अनुकूल प्रक्रियाओं को शामिल किया गया है और ऐसे अपराधों की त्वरित सुनवाई के लिए विशेष न्यायालयों की स्थापना का प्रावधान है।

5. यह विधेयक सभी बच्चों के यौन दुर्व्यवहार और शोषण से सुरक्षा, संरक्षण और संरक्षण के अधिकार को लागू करने में योगदान देगा।

6. खंडों पर नोट विधेयक में निहित विभिन्न प्रावधानों को विस्तार से समझाते हैं।

7. विधेयक उपरोक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता है।

12. जैसा कि ऊपर बताया गया है, पोकसो अधिनियम के अधिनियमन के उद्देश्य और कारण निस्संदेह यह दर्शाते हैं कि पोकसो अधिनियम के तहत शुरू की गई कार्यवाही को अचानक रद्द करना, धारा 482, सीआरपीसी के तहत शक्ति का प्रयोग करके, इसे परीक्षण में परिपक्व होने की अनुमति दिए बिना, अत्यंत सम्मोहक कारणों के अलावा, पूर्व दृष्टया दुर्भावना से शुरू किया गया या केवल बदला लेने के लिए शुरू किया गया, अधिनियमन के पीछे विधानमंडल की मूल मंशा के विरुद्ध होगा। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, बच्चों के खिलाफ यौन अपराधों से संबंधित कुछ मुद्दों को संबोधित करने के लिए मौजूदा कानूनों की अपर्याप्तता ने विधानमंडल को बच्चों की गोपनीयता और गोपनीयता की रक्षा और सम्मान करने और उनके शारीरिक, भावनात्मक, बौद्धिक और सामाजिक विकास को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से उपरोक्त कानून बनाने के लिए मजबूर किया। पोकसो अधिनियम ने बच्चों के खिलाफ विभिन्न अपराधों को परिभाषित करने वाले प्रावधानों की कमी और उनके लिए पर्याप्त दंडात्मक प्रावधानों को भी संबोधित किया। पोकसो अधिनियम के अंतर्गत विभिन्न प्रावधानों की सावधानीपूर्वक जांच करने पर पता चलता है कि उपरोक्त उद्देश्यों और प्रयोजनों को प्राप्त करने के लिए बच्चों के विरुद्ध विभिन्न अपराधों को विशेष रूप से परिभाषित किया गया है और अधिनियम में पर्याप्त दंड के प्रावधान भी डाले गए हैं। जाहिर है, बच्चे के स्तन को रगड़ना पोकसो अधिनियम की धारा 7 के अंतर्गत 'यौन उत्पीड़न' का अपराध माना जाएगा, जिसके लिए कम से कम तीन वर्ष की अवधि और पांच वर्ष तक की अवधि के कारावास और जुर्माना हो सकता है। इससे

पता चलता है कि बच्चों के विरुद्ध ऐसे अपराधों को जघन्य और गंभीर माना जाना चाहिए। कहने की जरूरत नहीं है कि ऐसे अपराधों को निजी प्रकृति के अपराधों के रूप में हल्के में नहीं लिया जा सकता है और वास्तव में ऐसे अपराधों को समाज के विरुद्ध अपराध माना जाना चाहिए। अटॉर्नी जनरल फॉर इंडिया बनाम सतीश और अन्य 10 के पैराग्राफ 38 में दिए गए निर्णय में इस न्यायालय ने इस प्रकार कहा:-

“यौन इरादे से बच्चे के शरीर के किसी भी यौन अंग को छूने या यौन इरादे से शारीरिक संपर्क से जुड़े किसी अन्य कृत्य को तुच्छ नहीं माना जा सकता या महत्वहीन या परिधीय नहीं माना जा सकता ताकि ऐसे कृत्य को धारा 7 के तहत “यौन हमले” के दायरे से बाहर रखा जा सके। जैसा कि इस न्यायालय ने बलराम कुमावत बनाम भारत संघ में कहा है, कानून की व्याख्या अपराध के विषय-वस्तु और कानून के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए की जानी चाहिए। कानून का उद्देश्य अपराधी को कानून के जाल से बाहर निकलने की अनुमति देना नहीं हो सकता।”

13. इस न्यायालय ने माना कि विधानमंडल ने पोकसो अधिनियम के तहत अपराधों की गंभीरता के संबंध में कुछ वैधानिक धारणाएँ शामिल की थीं।

14. उपर्युक्त पहलुओं को ध्यान में रखते हुए हम उपर्युक्त निर्णयों पर भरोसा करते हुए प्रस्तुत किए गए तर्कों और दलीलों पर विचार करेंगे।

15. तीसरे प्रतिवादी के विद्वान वकील द्वारा जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया है, उनके संबंध में यह देखा जा सकता है कि वे भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत याचिका के लिए तीसरे पक्ष के अधिकार क्षेत्र से संबंधित हैं। लेकिन फिर, इस न्यायालय ने पहले ही 02.12.2022 को भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत दायर याचिका को भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत एक विशेष अनुमति याचिका के रूप में परिवर्तित करने का आदेश पारित कर दिया है और आगे मामले को गुण-दोष के आधार पर पक्षों की सुनवाई के लिए सूचीबद्ध करने का आदेश दिया है। इसलिए, तथ्य यह है कि वर्तमान मामला इस न्यायालय के 02.12.2022 के आदेश के अनुसरण में भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत याचिका के रूप में अपना चरित्र पहले ही त्याग चुका है। इस न्यायालय की इस तरह का आदेश पारित करने की शक्ति को इस न्यायालय में निहित शक्ति या भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति के मद्देनजर विवादित नहीं किया जा सकता है। इस संदर्भ में, भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 और भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय की शक्ति की प्रकृति का वर्णन करने वाले इस न्यायालय के निम्नलिखित निर्णयों का उल्लेख करना भी प्रासंगिक है।

“अनुच्छेद 136 (1) इस अध्याय में किसी बात के होते हुए भी, सर्वोच्च न्यायालय अपने विवेकानुसार भारत के क्षेत्र में किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा पारित या बनाए गए किसी भी मामले में किसी भी निर्णय, डिक्री, निर्धारण, सजा या आदेश से अपील करने के लिए विशेष अनुमति दे सकता है।

(2) खंड (1) में कुछ भी सशस्त्र बलों से संबंधित किसी भी कानून द्वारा या उसके तहत गठित किसी भी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा पारित या बनाए गए किसी भी निर्णय, निर्धारण, सजा या आदेश पर लागू नहीं होगा।”

16. कुन्हयाम्मेद एवं अन्य के निर्णय में केरल राज्य और अन्य में, इस न्यायालय ने कहा:-

“....भारत के संविधान का अनुच्छेद 136 सर्वोच्च न्यायालय को प्रदान किया गया एक विशेष अधिकार क्षेत्र है जो अपनी प्रकृति में व्यापक है। यह इस अर्थ में एक अवशिष्ट शक्ति है कि यह सर्वोच्च न्यायालय को अपीलीय अधिकार क्षेत्र प्रदान करता है, बशर्ते कि ऐसे मामलों में विशेष अनुमति दी जाए जो पूर्ववर्ती अनुच्छेदों द्वारा कवर नहीं किए जा सकते हैं। यह एक विशेष अधिकार क्षेत्र प्रदान करने वाला एक अभिभावी प्रावधान है जो पूर्ववर्ती अनुच्छेदों के दायरे से बंधे हुए सर्वोच्च न्यायालय के अपीलीय अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने का प्रावधान करता है। अनुच्छेद 136 एक गैर-बाधित खंड के साथ शुरू होता है और यह बताता है कि पूर्ववर्ती अनुच्छेदों द्वारा कवर किए गए क्षेत्र में भी, अनुच्छेद 136 द्वारा प्रदान किया गया अधिकार क्षेत्र किसी उपयुक्त मामले में प्रयोग किए जाने के लिए उपलब्ध है। यह शक्ति का अप्रतिबंधित भंडार है जिसे परिभाषात्मक सीमाओं तक सीमित नहीं किया जा सकता है; विवेक केवल एक सीमा अर्थात् न्यायाधीशों की बुद्धि और न्याय की अच्छी समझ के अधीन। किसी भी पक्ष को अपील का कोई अधिकार नहीं दिया गया है; सर्वोच्च न्यायालय में केवल एक विवेकाधिकार निहित है कि वह आवेदक को अपने अपीलीय क्षेत्राधिकार में प्रवेश करने की अनुमति देकर हस्तक्षेप कर सकता है जो अन्यथा और अधिकार के रूप में खुला नहीं है।

17. दुर्गा शंकर मेहता बनाम ठाकुर रघुराज सिंह एवं अन्य के मामले में दिए गए निर्णय में इस न्यायालय ने पैराग्राफ 5 में इस प्रकार टिप्पणी की और माना:-

“5. संविधान के अनुच्छेद 136 द्वारा दी गई शक्तियाँ विशेष या अवशिष्ट शक्तियों की प्रकृति की हैं, जो सामान्य कानून के दायरे से बाहर भी प्रयोग की जा सकती हैं, ऐसे मामलों में जहाँ न्याय की आवश्यकता देश के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की माँग करती है। अनुच्छेद स्वयं यथासंभव व्यापक शब्दों में लिखा गया है। यह सर्वोच्च न्यायालय को किसी भी मामले में न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा दिए गए किसी भी प्रकार के निर्णय या आदेश के विरुद्ध विशेष अनुमति प्रदान करके अपीलों पर विचार करने और सुनवाई करने के मामले में पूर्ण अधिकारिता प्रदान करता है और इन शक्तियों का प्रयोग विशिष्ट प्रावधानों के बावजूद भी किया जा सकता है, क्योंकि सर्वोत्तम कारणों से इस

अनुच्छेद के तहत प्रयोग की जाने वाली शक्तियों को किसी भी तरह से बाधित या सीमित नहीं किया जा सकता है।”

18. उक्त परिस्थितियों में, यह प्रश्न कि क्या अपीलकर्ताओं के भारतीय संविधान के भाग III के तहत मौलिक अधिकार का कोई उल्लंघन हुआ है, इस पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह महत्वहीन है। हमारे अनुसार, उक्त परिस्थितियों में, एस.बी. सी.आर. एम.पी. संख्या 1348/2022 में दिनांक 04.02.2022 के आदेश को चुनौती देने के लिए अपीलकर्ताओं के अधिकार क्षेत्र पर विचार करते हुए, इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि क्या पी.एस.आर. साधनाथम के मामले (सुप्रा) और ऐसे अन्य प्रासंगिक निर्णयों में निर्धारित पैरामीटर संतुष्ट हैं या नहीं।

19. अब, हम दिनांक 04.02.2022 के आदेश को चुनौती देने के लिए अपीलकर्ताओं के अधिकार क्षेत्र के संबंध में विद्वान न्यायमित्र द्वारा संदर्भित निर्णयों का संदर्भ लेंगे। हम पहले ही नोट कर चुके हैं कि इस न्यायालय ने अपीलकर्ताओं द्वारा अनुच्छेद 32 के तहत दायर याचिका को भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत विशेष अनुमति याचिका के रूप में परिवर्तित कर दिया और विशेष रूप से गुण-दोष के आधार पर पक्षों की सुनवाई के लिए सूचीबद्ध किया। उपर्युक्त परिस्थितियों में, रमाकांत राय बनाम मदन राय और अन्य 13 में निर्णय प्रासंगिकता ग्रहण करता है। यह एक ऐसा मामला था जिसमें दोषियों को बरी करने के फैसले को, जो मूल रूप से ट्रायल कोर्ट द्वारा दोषी ठहराया गया था, उच्च न्यायालय द्वारा एक अपील में आपराधिक कार्यवाही के तीसरे पक्ष (मृतक के पिता) द्वारा इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी। अनुमति प्रदान की गई, यद्यपि वह भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत मूल आपराधिक कार्यवाही में पक्षकार नहीं था, इस आपत्ति को खारिज करते हुए कि आपराधिक कार्यवाही में कोई तीसरा पक्ष किसी दोषमुक्ति के खिलाफ अपील करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय की शक्ति का आह्वान नहीं कर सकता। इस न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय को उपलब्ध शक्ति पर विचार किया और माना कि ऐसी विशेष अनुमति याचिका बनाए रखने योग्य है। यह माना गया कि भारत के संविधान का अनुच्छेद 136 न तो किसी को सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने का अधिकार प्रदान करता है और न ही किसी को इसके अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने से रोकता है और उक्त शक्ति वास्तव में सर्वोच्च न्यायालय में निहित है। यह भी माना गया कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 136 के तहत शक्ति का प्रयोग किसी भी सीमा से घिरा हुआ है कि 'कौन इसका आह्वान कर सकता है'। रमाकांत राय के मामले में निर्णय का पैराग्राफ 12 प्रासंगिक स्थिति में प्रासंगिक है और यह इस प्रकार है:-

“12. उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के निर्णय के विरुद्ध भारत के संविधान (संक्षेप में “संविधान”) के अनुच्छेद 136 के अंतर्गत इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने के लिए राज्य से अलग एक निजी पक्ष की क्षमता के बारे में संदेह उठाया गया है। हमें संदेह में कोई सार नहीं दिखता। संविधान के अनुच्छेद 136 के अंतर्गत इस न्यायालय में निहित अपीलीय शक्ति को विशिष्ट विधियों के अंतर्गत अपीलीय न्यायालयों और अपीलीय न्यायाधिकरणों द्वारा प्रयोग की जाने वाली साधारण अपीलीय शक्ति के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए। यह एक पूर्ण

शक्ति है, जो न्याय की दबावपूर्ण मांगों को पूरा करने के लिए “साधारण कानून के दायरे से बाहर प्रयोग की जा सकती है” (दुर्गा शंकर मेहता बनाम रघुराज सिंह [एआईआर 1954 एससी 520] देखें)। संविधान का अनुच्छेद 136 न तो किसी को इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने का अधिकार देता है और न ही किसी को न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने से रोकता है। यह शक्ति इस न्यायालय में निहित है, लेकिन न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने का अधिकार किसी में निहित नहीं है। इस न्यायालय की शक्ति का प्रयोग किसी सीमा तक सीमित नहीं है कि कौन इसका आह्वान कर सकता है। जहां उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के निर्णय से न्याय का गंभीर हनन हुआ है, यह न्यायालय अपने कर्तव्य का पालन करने से विरत नहीं हो सकता है और इस आधार पर हस्तक्षेप करने से परहेज नहीं कर सकता है कि राज्य ने नहीं बल्कि किसी निजी पक्ष ने न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान किया है। हमें इस बात में जरा भी संदेह नहीं है कि हम संबंधित निजी पक्षों के कहने पर भी उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के निर्णयों के विरुद्ध अपील कर सकते हैं। यह परिस्थिति कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में "संहिता") किसी निजी पक्ष के कहने पर अधीनस्थ न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील करने का प्रावधान नहीं करती है, अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय की शक्ति के प्रश्न से कोई प्रासंगिकता नहीं रखती है। हम उल्लेख किया जा सकता है कि मोहन लाल बनाम अजीत सिंह [(1978) 3 एससीसी 279] में इस न्यायालय ने एक निजी पक्ष के कहने पर उच्च न्यायालय द्वारा बरी करने के फैसले में हस्तक्षेप किया था। यह आशंका व्यक्त की गई थी कि यदि निजी पक्षों के कहने पर बरी करने के फैसले के खिलाफ अपील की अनुमति दी जाती है तो अपीलों की बाढ़ आ सकती है। हम इस आशंका को साझा नहीं करते हैं। संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपील इस न्यायालय द्वारा दी गई विशेष अनुमति द्वारा मनोरंजन की जाती है, चाहे वह राज्य हो या कोई निजी पक्ष जो इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान करता है, और विशेष अनुमति स्वाभाविक रूप से नहीं दी जाती है, बल्कि केवल अच्छे और पर्याप्त कारणों के लिए, इस न्यायालय की अच्छी तरह से स्थापित प्रथा पर दी जाती है।

(रेखांकित)

20. अनुच्छेद 13 में व्यक्त किया गया दृष्टिकोण वस्तुतः अरुणाचलम बनाम पी.एस.आर. साधनाथम में इस न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया दृष्टिकोण था, जैसा कि रमाकांत राय के मामले में भी माना गया था। अरुणाचलम के मामले (सुप्रा) में, पी.एस.आर. साधनाथम और चार अन्य को उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि के निर्णय को पलटने पर दोषमुक्त किए जाने को मृतक के भाई अरुणाचलम ने विशेष अनुमति याचिका दायर करके चुनौती दी थी। वस्तुतः, केवल प्रथम आरोपी पी.एस.आर. साधनाथम के विरुद्ध ही अनुमति दी गई थी। यद्यपि अनुच्छेद 136 के अंतर्गत विशेष अनुमति याचिका बनाए रखने के लिए निजी पक्षकार के अधिकार क्षेत्र को उठाया गया था, जो मूल आपराधिक कार्यवाही में पक्षकार नहीं था, इस न्यायालय ने मोहन लाल बनाम अजीत सिंह के निर्णय पर भरोसा करते हुए माना कि यह न्यायालय निजी

पक्षों के कहने पर भी दोषमुक्त किए जाने के निर्णय के विरुद्ध अपील पर विचार कर सकता है। इसके अलावा, यह माना गया कि भारत के संविधान का अनुच्छेद 136 न तो किसी को सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने का अधिकार देता है और न ही किसी को न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने से रोकता है और जहां उच्च न्यायालय द्वारा बरी किए जाने के फैसले से न्याय की विफलता हुई है, सर्वोच्च न्यायालय अपने कर्तव्य को करने से नहीं चूकेगा और इस आधार पर हस्तक्षेप करने से नहीं बचेगा कि राज्य ने नहीं बल्कि एक निजी पक्ष ने न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान किया है। हम यहां यह जोड़ना चाहेंगे कि उक्त निर्णय धारा 372, सीआरपीसी में लाए गए संशोधन से पहले दिए गए थे, जो पीड़ित को अभियुक्त को बरी करने वाले न्यायालय द्वारा पारित आदेश के खिलाफ अपील करने का अधिकार प्रदान करता है और धारा 2 (डब्ल्यूए), सीआरपीसी के तहत "पीड़ित"अभिव्यक्ति के दायरे का विस्तार करता है। 31.12.2009 से प्रभावी, अधिनियम संख्या 5, 2009 के तहत अपने अभिभावक या कानूनी उत्तराधिकारी को शामिल करके, सीआरपीसी में दोषमुक्ति के खिलाफ अपील पेश करने के लिए। इसके अलावा, इस न्यायालय ने उन निर्णयों में विशेष रूप से माना कि एक निजी पक्ष संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान करते हुए दोषमुक्ति के खिलाफ अपील कर सकता है, यदि दोषमुक्ति के फैसले से न्याय का गंभीर हनन हुआ हो। हमारे अनुसार, संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत याचिका पेश करने के लिए तीसरे पक्ष के ऐसे अधिकार को निश्चित रूप से मान्यता दी जानी चाहिए और उस मामले में उसका सम्मान किया जाना चाहिए, जहां न्याय का हनन हुआ हो और फिर भी, न तो राज्य और न ही पीड़ित या 'पीड़ित'शब्द के तहत आने वाले किसी रिश्तेदार ने इस न्यायालय से संपर्क किया हो।

21. हमारे अनुसार, यह मामला उन मामलों की तुलना में कहीं अधिक मजबूत आधार पर खड़ा है। जब बरी करने के फैसले को चुनौती देने की अनुमति मांगी जाती है, तो निस्संदेह यह तथ्य सामने आता है कि बरी करने वाले को अदालत के समक्ष मुकदमे का सामना करना पड़ा था और बरी करना संबंधित ट्रायल कोर्ट द्वारा साक्ष्य की सराहना का परिणाम है।

22. यह मामला ऐसा नहीं है जिसमें तीसरे पक्ष ने बरी करने के फैसले को चुनौती देने की अनुमति मांगी हो। इस मामले में, ऊपर बताए गए गंभीर अपराधों के लिए तीसरे प्रतिवादी के खिलाफ दर्ज की गई एफआईआर को उच्च न्यायालय ने धारा 482, सीआरपीसी के तहत शक्ति का उपयोग करते हुए केवल इस तथ्य के आधार पर रद्द कर दिया था कि तीसरे और चौथे प्रतिवादियों के बीच समझौता हो गया था, जैसा कि ऊपर बताया गया है। यह एक तथ्य है कि सरकारी वकील के विरोध के बावजूद समझौता किया गया था और तब भी, राज्य ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को चुनौती देने के लिए अनुमति मांगने के लिए याचिका दायर करने का विकल्प नहीं चुना है। हालांकि, चौथा प्रतिवादी पीड़िता का पिता है, जिसने यौन उत्पीड़न और पोकसो अधिनियम और आईपीसी अपराधों के तहत ऐसे अन्य अपराधों को झेला है, इस तथ्य के मद्देनजर कि उसने तीसरे प्रतिवादी आरोपी के साथ अपराधों के लिए समझौता किया था, और जिस तरह से वह आरोपित आदेश का समर्थन करता है, यह स्पष्ट है कि वह भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान नहीं करेगा। दिनांक 04.02.2022 के आदेश को चुनौती देने के लिए अपीलकर्ताओं के अधिकार क्षेत्र पर विचार करते समय उपरोक्त पहलुओं को भी ध्यान में

रखा जाना चाहिए। अपीलकर्ता उसी गाँव में रहने वाले सामान्य व्यक्ति हैं जहाँ से चौथा प्रतिवादी रहता है। तीसरे और चौथे प्रतिवादी के लिए ऐसा कोई मामला नहीं है कि उन्होंने किसी निजी बदले या व्यक्तिगत प्रतिशोध के कारण विशेष अनुमति याचिका दायर की है। उन पर कोई गलत मंशा नहीं बताई गई है। हमने पहले ही इस तथ्य पर ध्यान दिया है कि पोकसो अधिनियम को लागू करने का उद्देश्य और तीसरे प्रतिवादी के खिलाफ कथित अपराधों पर भी ध्यान दिया है जो जघन्य और गंभीर प्रकृति के हैं। ब्लैकस्टोन द्वारा अपराधों की परिभाषा को इस न्यायालय ने पी.एस.आर. साधनान्थम के मामले (सुप्रा) में “सार्वजनिक अधिकारों और कर्तव्यों का उल्लंघन जो पूरे समुदाय को प्रभावित करता है” के रूप में नोट किया था, यह देखने के लिए कि ऐसी परिस्थितियों में एक अपराध कानून द्वारा सामान्य रूप से समाज के लिए हानिकारक माना जाने वाला कार्य है, भले ही इसका तत्काल पीड़ित एक व्यक्ति हो। तीसरे प्रतिवादी के खिलाफ आरोपित अपराधों की प्रकृति को देखते हुए, कोई केवल यह कह सकता है कि यदि वे साबित हो जाते हैं तो उन्हें केवल समाज के खिलाफ अपराध माना जा सकता है और किसी भी दर पर, यह नहीं कहा जा सकता है कि ऐसे अपराधी पर मुकदमा चलाना जिसके खिलाफ ऐसे आरोप लगाए गए हैं, समाज के हित में नहीं है। वास्तव में, यह केवल समाज के हित में होगा। मामले के उस दृष्टिकोण में, जब धारा 482, सीआरपीसी के तहत शक्ति का आह्वान करके एफआईआर को रद्द कर दिया जाता है, अभियुक्त को मुकदमे का सामना करने के दायित्व से मुक्त कर दिया गया था उपर्युक्त परिस्थितियों और तीसरे पक्ष के भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत याचिका बनाए रखने के लिए कानून की स्थिति के साथ, जैसा कि ऊपर संदर्भित निर्णयों से पता चला है, हमें यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि अपीलकर्ताओं के लोकस स्टैंडी के आधार पर चुनौती में कोई योग्यता नहीं है। हम उपरोक्त प्रश्न पर हमारे सामने उद्धृत अन्य निर्णयों पर विचार करना आवश्यक नहीं समझते हैं। संक्षेप में, हमें अपीलकर्ताओं को दिनांक 04.02.2024 के आदेश को चुनौती देने की अनुमति के अनुदान को रद्द करने का कोई आधार या कारण नहीं मिलता है।

23. अब हम दूसरे प्रश्न पर विचार करेंगे कि क्या धारा 482, सीआरपीसी के तहत शक्ति का आह्वान करते हुए आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने की शक्ति पीसी का प्रयोग केवल इस तथ्य पर निर्भर करके किया जा सकता है कि पक्षकार समझौता पर पहुंच गए हैं और ज्ञान सिंह मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय का निर्णय।

24. विद्वान न्यायमित्र ने दलील दी कि ज्ञान सिंह मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय के निर्णय का अवलोकन करने से ही उक्त प्रश्न के संबंध में कानूनी स्थिति का पता चल जाएगा। विद्वान न्यायमित्र ने उक्त निर्णय के पैराग्राफ 48, 57, 58 और 61 की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया। पैराग्राफ 57 और पैराग्राफ 48, 58 और 61 के प्रासंगिक अंश इस प्रकार हैं: -

“48. इस भाग को छोड़ते समय, यह जोड़ना आवश्यक प्रतीत होता है कि सैटलमेंट या समझौता न्यायालय की अंतरात्मा को संतुष्ट करना चाहिए। समझौता न्यायसंगत और निष्पक्ष होना चाहिए और साथ ही अनुचित दबाव से मुक्त होना चाहिए, न्यायालय को कमजोर और असुरक्षित पीड़ितों के मामलों की जांच आवश्यक सावधानी के साथ करनी चाहिए...”

57. अपराधी और पीड़ित के बीच समझौते के आधार पर अपराध या आपराधिक कार्यवाही को रद्द करना अपराध के शमन के समान नहीं है। वे भिन्न हैं और

अदला-बदली योग्य नहीं हैं। सख्ती से कहें तो धारा 320 के तहत न्यायालय को दी गई अपराधों के शमन की शक्ति उच्च न्यायालय द्वारा अपने निहित अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने से भौतिक रूप से भिन्न है। अपराधों के शमन में, आपराधिक न्यायालय की शक्ति धारा 320 में निहित प्रावधानों द्वारा परिसीमित होती है और न्यायालय पूरी तरह से उसी के अनुसार निर्देशित होता है, जबकि दूसरी ओर, आपराधिक अपराध या आपराधिक कार्यवाही या आपराधिक शिकायत को रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा राय बनाने का निर्देश रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री द्वारा दिया जाता है कि क्या न्याय के उद्देश्य शक्ति के ऐसे प्रयोग को उचित ठहराएंगे, हालांकि अंतिम परिणाम दोषमुक्ति या अभियोग की बर्खास्तगी हो सकती है।

58. जहां उच्च न्यायालय किसी आपराधिक कार्यवाही को इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए रद्द करता है कि अपराधी और पीड़ित के बीच विवाद सुलझा लिया गया है, हालांकि अपराध समझौता योग्य नहीं हैं, वह ऐसा इसलिए करता है क्योंकि उसकी राय में आपराधिक कार्यवाही जारी रखना व्यर्थ होगा और मामले में न्याय की मांग है कि पक्षों के बीच विवाद को समाप्त कर दिया जाए और शांति बहाल हो; न्याय के लक्ष्यों को सुरक्षित करना अंतिम मार्गदर्शक कारक है। निस्संदेह, अपराध ऐसे कार्य हैं जिनका जनता पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है और ऐसे गलत काम होते हैं जो समाज की भलाई को गंभीर रूप से खतरे में डालते हैं और अपराधी को केवल इसलिए छोड़ना सुरक्षित नहीं है क्योंकि उसने और पीड़ित ने विवाद को सौहार्दपूर्ण ढंग से सुलझा लिया है या पीड़ित को मुआवजा दिया गया है, फिर भी कुछ अपराधों को कानून में समझौता योग्य बना दिया गया है, चाहे वह अदालत की अनुमति से हो या उसके बिना। हत्या, बलात्कार, डकैती आदि जैसे गंभीर अपराधों या भारतीय दंड संहिता के तहत मानसिक विकृति के अन्य अपराधों या भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम जैसे विशेष कानूनों के तहत नैतिक पतन के अपराधों या उस क्षमता में काम करते हुए लोक सेवकों द्वारा किए गए अपराधों के संबंध में, अपराधी और पीड़ित के बीच समझौते को कोई कानूनी मंजूरी नहीं मिल सकती है। हालांकि, कुछ अपराध जो मुख्य रूप से सिविल प्रकृति के होते हैं, जैसे कि सिविल, व्यापारिक, वाणिज्यिक, वित्तीय, साझेदारी या ऐसे ही अन्य लेन-देन से उत्पन्न हुए हों या विवाह से उत्पन्न हुए अपराध, विशेष रूप से दहेज आदि से संबंधित हों या पारिवारिक विवाद, जहां गलत मूल रूप से पीड़ित के लिए हो और अपराधी और पीड़ित ने अपने बीच के सभी विवादों को सौहार्दपूर्ण ढंग से सुलझा लिया हो, इस तथ्य के बावजूद कि ऐसे अपराधों को समझौता योग्य नहीं बनाया गया है, उच्च न्यायालय अपनी अंतर्निहित शक्ति के ढांचे के भीतर आपराधिक कार्यवाही या आपराधिक शिकायत या एफआईआर को रद्द कर सकता है यदि वह संतुष्ट है कि इस तरह के समझौते के आधार पर अपराधी को दोषी ठहराए जाने की कोई संभावना नहीं है और आपराधिक कार्यवाही को रद्द न करने से न्याय बाधित

होगा और न्याय का उद्देश्य विफल हो जाएगा। उपरोक्त सूची उदाहरणात्मक है और संपूर्ण नहीं है। प्रत्येक मामला अपने तथ्यों पर निर्भर करेगा और कोई सख्त श्रेणी निर्धारित नहीं की जा सकती है।

61. उपरोक्त चर्चा से जो स्थिति उभर कर आती है, उसे इस प्रकार संक्षेपित किया जा सकता है: अपने अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में किसी आपराधिक कार्यवाही या एफआईआर या शिकायत को रद्द करने की उच्च न्यायालय की शक्ति, संहिता की धारा 320 के तहत अपराधों को कम करने के लिए आपराधिक न्यायालय को दी गई शक्ति से भिन्न और अलग है। अंतर्निहित शक्ति व्यापक है और इसमें कोई वैधानिक सीमा नहीं है, लेकिन इसका प्रयोग ऐसी शक्ति में निहित दिशा-निर्देशों के अनुसार किया जाना चाहिए, जैसे: (i) न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करना, या (ii) किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकना। आपराधिक कार्यवाही या शिकायत या एफआईआर को रद्द करने की शक्ति का प्रयोग किन मामलों में किया जा सकता है, जहां अपराधी और पीड़ित ने अपने विवाद को सुलझा लिया है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा और कोई श्रेणी निर्धारित नहीं की जा सकती है। हालांकि, ऐसी शक्ति का प्रयोग करने से पहले, उच्च न्यायालय को अपराध की प्रकृति और गंभीरता पर उचित ध्यान देना चाहिए। मानसिक विकृति के जघन्य और गंभीर अपराध या हत्या, बलात्कार, डकैती आदि जैसे अपराध उचित रूप से रद्द नहीं किए जा सकते, भले ही पीड़ित या पीड़ित के परिवार और अपराधी ने विवाद सुलझा लिया हो। ऐसे अपराध निजी प्रकृति के नहीं होते और समाज पर गंभीर प्रभाव डालते हैं। इसी तरह, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम जैसे विशेष कानूनों के तहत अपराधों या उस क्षमता में काम करते हुए सरकारी कर्मचारियों द्वारा किए गए अपराधों आदि के संबंध में पीड़ित और अपराधी के बीच कोई समझौता ऐसे अपराधों से जुड़ी आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने का कोई आधार नहीं दे सकता। लेकिन आपराधिक मामले जो मुख्य रूप से सिविल प्रकृति के होते हैं, उन्हें निरस्त करने के उद्देश्य से अलग आधार पर रखा जाता है, विशेष रूप से वाणिज्यिक, वित्तीय, व्यापारिक, सिविल, भागीदारी या ऐसे ही अन्य लेन-देन से उत्पन्न होने वाले अपराध या दहेज आदि से संबंधित विवाद से उत्पन्न होने वाले अपराध या पारिवारिक विवाद जहां गलती मूल रूप से निजी या व्यक्तिगत प्रकृति की होती है और पक्षों ने अपना पूरा विवाद सुलझा लिया होता है। इस श्रेणी के मामलों में, उच्च न्यायालय आपराधिक कार्यवाही को निरस्त कर सकता है यदि उसके विचार में, अपराधी और पीड़ित के बीच समझौते के कारण, दोषसिद्धि की संभावना बहुत कम है और आपराधिक मामले को जारी रखने से अभियुक्त को बहुत अधिक उत्पीड़न और पूर्वाग्रह का सामना करना पड़ेगा और पीड़ित के साथ पूर्ण और संपूर्ण समझौता होने के बावजूद आपराधिक मामले को निरस्त न करने से उसके साथ अत्यधिक अन्याय होगा। दूसरे शब्दों में, उच्च न्यायालय को इस बात पर विचार करना चाहिए कि क्या

आपराधिक कार्यवाही जारी रखना न्याय के हित के विरुद्ध या अनुचित होगा अथवा पीड़ित और अपराधी के बीच समझौते के बावजूद आपराधिक कार्यवाही जारी रखना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा और क्या न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए यह उचित है कि आपराधिक मामले को समाप्त कर दिया जाए और यदि उपरोक्त प्रश्न(ओं) का उत्तर सकारात्मक है, तो उच्च न्यायालय आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के अपने अधिकार क्षेत्र में होगा।

(रेखांकित)

25. इस प्रकार, इस न्यायालय ने स्पष्ट शब्दों में माना कि धारा 482, सीआरपीसी के तहत शक्ति का प्रयोग करने से पहले उच्च न्यायालय को अपराध की प्रकृति और गंभीरता पर उचित ध्यान देना चाहिए, साथ ही यह भी देखना चाहिए कि जघन्य और गंभीर अपराधों को रद्द नहीं किया जा सकता है, भले ही पीड़ित या पीड़ित के परिवार और अपराधी ने विवाद सुलझा लिया हो। इस न्यायालय ने माना कि ऐसे अपराध निजी प्रकृति के नहीं होते हैं और समाज पर गंभीर प्रभाव डालते हैं। दूसरे प्रश्न पर कानून की स्थिति को समझने के बाद कि संबंधित न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह इस बात पर विचार करे कि समझौता न्यायसंगत और निष्पक्ष है या नहीं और साथ ही अनुचित दबाव से मुक्त है या नहीं, हम मामले पर आगे विचार करेंगे। दिनांक 04.02.2022 के विवादित आदेश का केवल अवलोकन करने से पता चलता है कि उच्च न्यायालय ने ज्ञान सिंह के मामले (सुप्रा) में निर्धारित कानून पर उचित विचार न करके गलती की है। आरोपित आदेश से पता चलता है कि विषयगत एफआईआर में निहित आरोपों को खारिज करने से पहले उन पर ध्यान भी नहीं दिया गया था। हमने उन आरोपों का उल्लेख किया है जो एफआईआर से पता चले गंभीर प्रकृति के हैं। इस मामले में शिकायत इस कार्यवाही में प्रस्तुत एफआईआर के साथ अनुलग्नक पी-1 के रूप में संलग्न है। उक्त शिकायत जिसके कारण एफआईआर दर्ज की गई, मैं इस प्रकार लिखा है:-

“इसलिए मेरी रिपोर्ट दर्ज की जाए और अपराधी विमल कुमार गुप्ता के खिलाफ कार्रवाई की जाए क्योंकि वह मुझ पर रिपोर्ट दर्ज न करने का दबाव बना रहा है।”

(रेखांकित)

26. इस संदर्भ में, यह ध्यान देने योग्य है कि जिस शिकायत के कारण एफआईआर दर्ज की गई थी, वह 08.01.2022 को दर्ज की गई थी और उसके कुछ ही सप्ताह बाद यानी 31.01.2022 को तीसरे और चौथे प्रतिवादियों के बीच समझौता हो गया था। विवादित आदेश के अवलोकन से पता चलता है कि कथित अपराध का उल्लेख किए बिना और इस प्रकार अपराध की प्रकृति और गंभीरता को देखे बिना, केवल समझौते पर भरोसा करते हुए, उच्च न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की: -

“यह न्यायालय माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों द्वारा उचित रूप से निर्देशित है और यह महसूस करता है कि यदि विवाद मूलतः पक्षों के बीच है, चाहे वे रिश्तेदार हों, पड़ोसी हों या व्यापारिक संबंध रखते हों और जिसका समाज पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, तो ऐसे मामलों में, दोनों पक्षों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखने और संबंधों की पुनर्स्थापना के लिए तथा उनके बीच विवाद को स्थायी रूप से समाप्त करने के उद्देश्य से, उच्च न्यायालय को एफआईआर और उसके बाद शुरू की गई सभी अन्य कार्यवाही को रद्द करने

के लिए अपनी अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करना चाहिए। इस मामले में, हालांकि अपराध समझौता योग्य नहीं हैं, लेकिन पक्षों ने विवाद को सौहार्दपूर्ण ढंग से सुलझा लिया है और यह मूलतः पक्षों के बीच है, जो सार्वजनिक शांति और सौहार्द को प्रभावित नहीं कर रहा है, इसलिए सद्भाव बनाए रखने और पक्षों के बीच विवाद को अंतिम रूप से हल करने के उद्देश्य से, एफआईआर और उसके अनुसरण में की गई सभी आगे की कार्यवाही को रद्द करना उचित समझा जाता है।”

(रेखांकित)

27. यह भी ध्यान देने योग्य है कि एफआईआर और आगे की कार्यवाही को रद्द करने के बाद, संबंधित पुलिस स्टेशन के एसएचओ को आदेश की एक प्रति प्राप्त होने की तारीख से एक महीने की अवधि के भीतर संबंधित न्यायिक मजिस्ट्रेट के साथ एक समापन रिपोर्ट दायर करने का निर्देश दिया गया था।

28. आक्षेपित आदेश का एक मात्र अवलोकन और ज्ञान सिंह के मामले (सुप्रा) में टिप्पणियों और बाध्यकारी निष्कर्षों के प्रकाश में, विषय एफआईआर में आरोपों को ध्यान में रखते हुए, यह पता चलता है कि उच्च न्यायालय ने ज्ञान सिंह के मामले (सुप्रा) में निर्धारित कानून को गलत तरीके से पढ़ा और गलत तरीके से लागू किया है ताकि विषय एफआईआर और उसके अनुसरण में आगे की सभी कार्यवाही को रद्द कर दिया जा सके। हम यह समझने में असमर्थ हैं कि उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर कैसे पहुंचा कि इस मामले में पक्षों के बीच एक विवाद है जिसे सुलझाया जाना चाहिए और सद्भाव बनाए रखने के लिए एफआईआर और उससे संबंधित सभी कार्यवाही को विषय एफआईआर में तीसरे प्रतिवादी के खिलाफ लगाए गए आरोपों पर ध्यान दिए बिना भी रद्द कर दिया जाना चाहिए। यह भी एक तथ्य है कि हालांकि ज्ञान सिंह के मामले (सुप्रा) में निर्णय के संदर्भ में न्यायालय का यह अपरिहार्य कर्तव्य है कि वह इस बात पर विचार करे कि न्याय के हित में समझौता किया जा सकता है या नहीं, लेकिन आक्षेपित आदेश से पता चलता है कि उच्च न्यायालय इस संबंध में भी उचित विचार करने में विफल रहा है।

29. प्रासंगिक स्थिति में, मध्य प्रदेश राज्य बनाम लक्ष्मी नारायण में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय का संदर्भ देना भी प्रासंगिक है। इस न्यायालय ने माना कि एफआईआर निरस्त करने योग्य है या नहीं, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा और इस प्रश्न पर विचार करते समय, न्यायालय को (i) क्या अपराध समाज के खिलाफ है या अकेले व्यक्ति के खिलाफ है, विवाद की प्रकृति, (ii) गंभीरता और अपराध कैसे किया गया (iii) क्या अपराध किसी विशेष कानून के तहत है (iv) कार्यवाही का चरण और आरोपी ने शिकायतकर्ता के साथ समझौता कैसे किया।

30. इस संबंध में, यह ध्यान रखना प्रासंगिक है कि इस मामले में पीड़ित उस समय 16 वर्ष की आयु में हायर सेकेंडरी में कक्षा 11 वीं का छात्र था। शिकायतकर्ता अर्थात् चौथे प्रतिवादी के एफआईआर में संलग्न बयान से ही पता चलता है कि 08.01.2022 को उसने तीसरे प्रतिवादी की ओर से उसे रिपोर्ट दर्ज करने से रोकने के दबाव के बारे में शिकायत की थी। इसके तुरंत बाद 31.01.2022 को समझौता कर लिया गया। उक्त स्थिति के बावजूद, न्यायालय ने तीसरे आरोपी के खिलाफ लगाए गए गंभीर आरोपों और ज्ञान सिंह के

मामले (सुप्रा) में निर्धारित कानून के मद्देनजर न्याय के हित में इस बात पर विचार नहीं किया है कि माता-पिता और आरोपी के बीच किए गए समझौते पर कार्रवाई की जा सकती है या नहीं। इस संदर्भ में, सुनील रायकवार बनाम राज्य एवं अन्य मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय का संदर्भ देना प्रासंगिक है। इसमें पैराग्राफ 12, जहां तक प्रासंगिक है, इस प्रकार है:-

“12. पीड़ित के पिता को आरोपी के साथ विवाद सुलझाने की अनुमति नहीं दी जा सकती। वह पीड़ित नहीं है और अदालतों को बुरी ताकतों के हमले से बच्चों के हितों की रक्षा करनी है। हम इस तथ्य को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते कि आरोपी पर एक ऐसे अपराध के लिए मुकदमा चलाया जा रहा है जो समाज की मूल्य प्रणाली को झकझोरता है और यह ऐसा मामला नहीं है जिसे एक मामूली अपराध के रूप में सुलझाया जा सकता है। दूसरों को ऐसा अपराध करने से रोकना ज़रूरी है और उन्हें यह संकेत नहीं मिलना चाहिए कि किसी भी चीज़ और हर चीज़ से समझौता किया जा सकता है...”

31. पोक्सो अधिनियम को लागू करने के मूल उद्देश्य और प्रयोजन को देखते हुए, हमें दिए गए मामले में ऊपर दिए गए पैराग्राफ 12 में दिए गए निष्कर्षों से असहमत होने का कोई कारण नहीं मिलता है। यह तब और भी अधिक है, जब एफआईआर में संलग्न शिकायत से निकाला गया अंश और इससे पहले निकाला गया अंश यह प्रकट करता है कि आरोपी उस पर कोई रिपोर्ट दर्ज न करने का दबाव बना रहा था। शिकायत में ऐसा बयान देने के बावजूद, कुछ हफ्तों के भीतर, आरोपी चौथे प्रतिवादी और उसकी पत्नी के साथ मामले में समझौता करने में कामयाब हो गया।

32. ज्ञान सिंह के मामले (सुप्रा) और लक्ष्मी नारायण के मामले (सुप्रा) में कार्यवाही को रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा भरोसा किए गए निर्णय में स्पष्ट शब्दों में इस न्यायालय ने माना कि धारा 482, सीआरपीसी के तहत शक्ति समझौते के आधार पर कार्यवाही को रद्द करने के लिए इसका इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है, अगर यह जघन्य अपराध के संबंध में है जो निजी प्रकृति का नहीं है और समाज पर गंभीर प्रभाव डालता है। जब कथित तौर पर उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में उपरोक्त प्रकृति और गंभीरता की कोई घटना घटी है, वह भी एक शिक्षक से, तो इसे केवल एक अपराध के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता है जो पूरी तरह से निजी प्रकृति का है और समाज पर कोई गंभीर प्रभाव नहीं डालता है।

33. उपर्युक्त कारणों को देखते हुए और ऊपर संदर्भित निर्णयों के आलोक में, एस.बी.सी.आर.एम.पी. संख्या 1348/2022 में उच्च न्यायालय का दिनांक 04.02.2022 का विवादित आदेश, जिसमें दिनांक 08.01.2022 की एफआईआर संख्या 6/2022 और उसके अनुसार सभी आगे की कार्यवाही को केवल इस आधार पर रद्द कर दिया गया कि आरोपी और शिकायतकर्ता ने मामले को सुलझा लिया है, हस्तक्षेप को आमंत्रित करता है। हमें यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि इस प्रकृति के मामलों में, यह तथ्य कि पक्षों के बीच हुए समझौते के मद्देनजर, दोषसिद्धि की संभावना बहुत कम है और यह भी धारा 482, सीआरपीसी के तहत शक्ति का आह्वान करके एफआईआर और उसके अनुसार सभी आगे की कार्यवाही को रद्द करके जांच को अचानक समाप्त करने का आधार नहीं हो सकता है। उक्त परिस्थितियों में, यह अपील

स्वीकार की जाती है। एस.बी.सी.आर.एम.पी. संख्या 1348/2022 में उच्च न्यायालय के दिनांक 04.02.2022 के आक्षेपित आदेश को निरस्त किया जाता है तथा अपास्त किया जाता है। परिणामस्वरूप, एफआईआर संख्या 6/2022, जांच तथा उसके अनुसार आपराधिक कार्यवाही, धारा 173(2), सीआरपीसी के तहत दर्ज की जाने वाली रिपोर्ट की प्रकृति के अधीन, आरोपी के खिलाफ कानून के अनुसार आगे बढ़ाई जाए।

34. हम यह स्पष्ट करते हैं कि यह नहीं समझा जाएगा कि हमने मामले के गुण-दोष पर कोई टिप्पणी की है।

35. अंत में, हम श्री आर. बसंत, विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा एमिक्स क्यूरी के रूप में न्यायालय को प्रदान की गई अमूल्य सहायता के लिए अपना आभार और प्रशंसा व्यक्त करते हैं, जिन्हें श्री अविरल सक्सेना, एडवोकेट ऑन रिकॉर्ड द्वारा कुशलतापूर्वक सहायता प्रदान की गई।

.....जे.

(सी टी रविकुमार)

.....जे.

(संजय कुमार)

नई दिल्ली

07 नवम्बर 2024

Judgment translated by

Adv. Sunil Fageria

DECLARATION

मैं एडवोकेट सुनील फगेरिया एतद्वारा घोषणा करता हूं कि मैंने उपरोक्त निर्णय का अंग्रेजी भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद किया है और जहां तक मेरी जानकारी है, इससे पहले उपरोक्त निर्णय हिंदी भाषा में उपलब्ध नहीं था।